

सिद्धान्त सार

!! श्रीसर्वज्ञवीतरागाय नमः !!

श्रीमद्-भट्टारक-सकलकीर्ति विरचित

श्री

सिद्धांत-सार-दीपक

मूल संस्कृत गाथा

आभार :

!! नमः श्रीसर्वज्ञवीतरागाय !!

ओंकारं बिन्दुसंयुक्तं नित्यं ध्यायन्ति योगिनः

कामदं मोक्षदं चैव ॐकाराय नमो नमः ॥1॥

अविरलशब्दघनौघप्रक्षालितसकलभूतलकलंका

मुनिभिरूपासिततीर्था सरस्वती हरतु नो दुरितान् ॥2॥

अज्ञानतिमिरान्धानां ज्ञानाञ्जनशलाकया

चक्षुरुन्मीलितं येन तस्मै श्रीगुरुवे नमः ॥3॥

अर्थ : बिन्दुसहित ॐकार को योगीजन सर्वदा ध्याते हैं, मनोवाँछित वस्तु को देने वाले और मोक्ष को देने वाले ॐकार को बार बार नमस्कार हो । निरंतर दिव्य-ध्वनि-रूपी मेघ-समूह संसार के समस्त पापरूपी मैल को धोनेवाली है मुनियों द्वारा उपासित भवसागर से तिरानेवाली ऐसी जिनवाणी हमारे पापों को नष्ट करो । जिसने अज्ञान-रूपी अंधेरे से अंधे हुये जीवों के नेत्र ज्ञानरूपी अंजन की सलाई से खोल दिये हैं, उस श्री गुरु को नमस्कार हो । परम गुरु को नमस्कार हो, परम्परागत आचार्य गुरु को नमस्कार हो ।

॥ श्रीपरमगुरुवे नमः, परम्पराचार्यगुरुवे नमः ॥

सकलकलुषविध्वंसकं, श्रेयसां परिवर्धकं, धर्मसम्बन्धकं, भव्यजीवमनः प्रतिबोधकारकं, पुण्यप्रकाशकं, पापप्रणाशकमिदं शास्त्रं श्री-सिद्धांत-सार-दीपक नामधेयं, अस्य मूल-ग्रन्थकर्तारः श्री-सर्वज्ञ-देवास्तदुत्तर-ग्रन्थ-कर्तारः श्री-गणधर-देवाः प्रति-गणधर-देवास्तेषां वचनानुसार-मासाद्य श्रीभट्टारक-सकलकीर्ति-देव विरचितं ॥

(समस्त पापों का नाश करनेवाला, कल्याणों का बढ़ानेवाला, धर्म से सम्बन्ध रखनेवाला, भव्यजीवों के मन को प्रतिबुद्ध-सचेत करनेवाला यह शास्त्र श्री-सिद्धांत-सार-दीपक नाम का है, मूल-ग्रन्थ के रचयिता सर्वज्ञ-देव हैं, उनके बाद ग्रन्थ को गूँथनेवाले गणधर-देव हैं, प्रति-गणधर देव हैं उनके वचनों के अनुसार लेकर श्रीभट्टारक-सकलकीर्ति-देव द्वारा रचित यह ग्रन्थ है । सभी श्रोता पूर्ण सावधानी पूर्वक सुनें ।)

॥ श्रोतारः सावधानतया शृण्वन्तु ॥

मंगलं भगवान् वीरो मंगलं गौतमो गणी

मंगलं कुन्दकुन्दार्यो जैनधर्मोऽस्तु मंगलम् ॥

सर्वमंगलमांगल्यं सर्वकल्याणकारकं

प्रधानं सर्वधर्माणां जैनं जयतु शासनम् ॥

(देव वंदना)

सुध्यान में लवलीन हो जब, घातिया चारों हने ।

सर्वज्ञ बोध विरागता को, पा लिया तब आपने ॥

उपदेश दे हितकर अनेकों, भव्य निज सम कर लिये ।

रविज्ञान किरण प्रकाश डालो, वीर! मेरे भी हिये ॥

(शास्त्र वंदना)

स्याद्वाद, नय, षट् द्रव्य, गुण, पर्याय और प्रमाण का ।

जड़कर्म चेतन बंध का, अरु कर्म के अवसान का ॥

कहकर स्वरूप यथार्थ जग का, जो किया उपकार है ।

उसके लिये जिनवाणी माँ को, वंदना शत बार है ॥

(गुरु वंदना)

निःसंग हैं जो वायुसम, निर्लेप हैं आकाश से ।

निज आत्म में ही विहरते, जीवन न पर की आस से ॥

जिनके निकट सिंहादि पशु भी, भूल जाते क्रूरता ।

उन दिव्य गुरुओं की अहो! कैसी अलौकिक शूरता ॥

श्रीमन्तं त्रिजगन्नाथं सर्वज्ञम् सर्वदर्शिनम् ।

सर्वयोगीन्द्रवन्द्या ?? वन्दे विश्वार्थदीपकम् ॥1॥

अन्वयार्थ : जो अनन्तचतुष्टयरूप अन्तरङ्ग और अष्टप्रातिहार्यरूप बहिरंग लक्ष्मी से युक्त हैं, सर्वज्ञ हैं, सर्वदर्शी हैं, समस्त योगिराजों के द्वारा जिनके चरण वन्दनीय हैं तथा जो विश्व के पदार्थों को प्रकाशित करने के लिये दीपक हैं ऐसे तीनलोक के नाथ जिनेन्द्रभगवान को मैं नमस्कार करता हूँ ॥१॥

दिव्येन ध्वनिना येत कालादौ धर्मवृत्तये ।

लोकालोकपदार्थौघा विश्वतत्त्वादिभिः समम् ॥2॥

प्रोक्ता आर्यगणेशादीनग्रजं तं जिनेशिनाम् ।

विश्वार्च्यं विश्वकर्तारं धर्मचक्राधिपं स्तुवे ॥3॥

अन्वयार्थ : जिन्होंने युग के प्रारम्भ में (तृतीयकाल के अन्त में) धर्म की प्रवृत्ति चलाने के लिये दिव्यध्वनि के द्वारा आर्यगणधरादिकों को समस्त तत्वों के साथ लोक अलोक के पदार्थ समूह का उपदेश दिया था, जो अन्य तेईस तीर्थकरों के अग्रज थे, विश्व के द्वारा पूजनीय थे, कर्मभूमि की व्यवस्था करने से विश्व के कर्ता और धर्म चक्र के अधिपति थे उन प्रथम तीर्थकर भगवान ऋषभदेव की स्तुति करता हूँ ॥

२-३॥

प्रीणयित्वा जगद्भव्यान् यो ज्ञानामृतवर्षणः ।

विश्वमुद्योतयामास कृत्स्नाङ्गपूर्वभाषणै ॥4॥

जगदानन्दकर्तारं धर्मांमृतपयोधरम् ।

नौमि चन्द्रप्रभं तं च योगिज्योतिर्गणावृत्तम् ॥5॥

अन्वयार्थ : जिन्होंने ज्ञानरूप अमृत की वर्षा से जगत् के भव्यजीवों को संतुष्ट किया, सम्पूर्ण अङ्ग और पूर्व के व्याख्यानो द्वारा जगत् को प्रकाशित किया, जो सर्व प्रकार से जगत् में आनन्द के कर्ता एवं धर्मांमृत को बरसाने के लिये मेघ स्वरूप हैं, तथा जो योगिराजरूप ज्योतिष्क देवों से सदा घिरे रहते हैं ऐसे उन चन्द्रप्रभ भगवान को मैं नमस्कार करता हूँ ॥४-५॥

यो दिव्यध्वनिनोच्छिद्य मोहस्मराक्षतस्करान् ।

कषायशत्रुभिः सार्द्धं व्यधाच्छान्तिं जगत्सताम् ॥6॥

त कामचक्रितीर्थेश-पदत्रितयभागिनम् ।

अनन्तर्द्धिं गुणाम्भोधिम् स्तौमि कर्मारिशान्तये ॥7॥

अन्वयार्थ : जिन्होंने अपनी दिव्यध्वनि के द्वारा जगत् के भव्यजीवों के कषायरूप शत्रुओं के साथ साथ काम, मोह और इन्द्रियरूप चोरों का विनाश किया और उन्हें शान्ति प्रदान की, तथा जो काम-देव, चक्रवर्ती एवं तीर्थकर इन तीन पदों के भोक्ता हुये हैं, जो अनन्तऋद्धियों

एवं गुणों के समुद्र हैं ऐसे उन सोलहवें तीर्थकर श्री शान्तिनाथ भगवान् को मैं अपने ज्ञानावरणादि रूप कर्मशत्रुओं का विनाश करने के लिये नमस्कार करता हूँ ॥६-७॥

मोहकामाक्षशत्रूणां भङ्क्त्वा बाल्येऽपि यो मुखम् ।

वैराग्यज्ञानमुत्पाद्य दुर्लभां संयमश्रियम् ॥८॥

गृहीत्वाहत्य कर्माग्नीन् शुक्लध्यानासिनाकरोत् ।

मुक्तिस्त्रीं स्ववशे नौमि नेमिनाथं तमूर्जितम् ॥९॥

अन्वयार्थ : बाल्य अवस्था में ही जिन्होंने मोह, काम और इन्द्रिय रूप शत्रुओं का मुख तोड़ कर वैराग्य और ज्ञान के बल पर दुर्लभसंयमरूपी लक्ष्मी को धारण किया, शुक्लध्यानरूप तलवार से जिन्होंने कर्म शत्रुओं का सर्वथा विनाश कर मुक्तिरूपी स्त्री को अपने स्वाधीन बना लिया है उन विशिष्ट बलशाली नेमिनाथ भगवान् को मैं नमस्कार करता हूँ ॥८-९॥

जित्वा यो ध्यानयोगेन वैरिदेवकृतान् परान् ।

घोरोपसर्गजालांश्च महावाताम्बुवर्षणैः ॥१०॥

चकार केवलज्ञानं व्यक्तं विश्वाग्रदीपकम् ।

स विश्वविघ्नहन्ता मे पार्श्वोऽस्तु विघ्नहानये ॥११॥

अन्वयार्थ : जिन्होंने अपने बैरी देव (कमठ के जीव) द्वारा प्रचण्डवायु और वर्षाजन्य किये गये भयंकर उपसर्गों को अपने ध्यान के प्रभाव से जीतकर तीनकाल की पर्यायों से युक्त समस्त द्रव्यों को प्रकाशित करने वाले केवलज्ञान को व्यक्त-प्राप्त किया है, जिनके प्रभाव से संसार के समस्त विघ्न नष्ट हो जाते हैं ऐसे पार्श्वनाथ भगवान् मेरे विघ्नों की शान्ति करने वाले हो अर्थात् इस ग्रंथ के निर्माण (या टीका) करने में आने वाले मेरे सम्पूर्ण विघ्नों को नष्ट करे ॥ १०-११॥